स्पूतनिक की उड़ान और विज्ञान शिक्षण

कालूराम शर्मा

शिक्षक प्रशिक्षण का सत्र खत्म होने के बाद दोपहर में सामूहिक भोजन और फिर गपशप के साथ एक हल्की-सी नींद। आखिर गर्मी की तपन में शिक्षक जाएँ भी तो कहाँ। शाम को शिक्षकों और स्रोत दल के लिए पुस्तकालय और अन्य सार्थक गतिविधियों का आयोजन तो होता ही है। कुछ शिक्षक और स्रोत दल के लोग शाम के वक्त घूमने का आनन्द लेते दिख जाते हैं। कभी-कभार शाम को कुछ लोग अपने पसन्दीदा सिनेमा देखने का लुत्फ उठाते भी नज़र आते हैं।

मास्साब ने सिनेमा की टिकट हाथ में थामे अपने साथ आए स्रोत सदस्य से पूछा, "आखिर ये होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण की शुरुआत कैसे हुई होगी? इसके पीछे कौन-सी सोच रही होगी?" मास्साब बहुत ही हल्के-फुल्के मूड में थे। स्रोत सदस्य दाढ़ी के अन्दर ही मुस्करा रहे थे। पीछे से मास्साब के दोनों कन्धों को ज़ोर-से दबाते हुए कहने लगे, "सवाल

दिलचस्प है आपका। चलो, अभी तो फिल्म देखते हैं! फिर होस्टल में चलकर बात करेंगे।"

देर रात को जब फिल्म देखकर आए तो विज्ञान शिक्षण के इतिहास पर चर्चा ने ज़ोर पकड़ा। स्रोत दल के सदस्य और शिक्षक होस्टल की छत पर अँधेरी-तारोंभरी रात में विज्ञान शिक्षण के इतिहास पर गपियाने लगे। स्रोत सदस्य ने अपनी बात को कहानीनुमा अन्दाज़ में कुछ यों पिरोया।

कहानी होविशिका की

"वास्तव में होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण की शुरुआत की कहानी बड़ी ही दिलचस्प है। असल में, बात कुछ यूँ है कि बीसवीं सदी के मध्य (अक्टूबर 1959) में सोवियत संघ ने स्पूतनिक छोड़ा था। ज़ाहिर है, इस मानव निर्मित वस्तु को पृथ्वी के चक्कर लगाते, बीप-बीप-बीप करते देखना रोमांचक था। अन्तरिक्ष विज्ञान में यह एक अभूतपूर्व और चौकाने वाली घटना थी जिसका सारी दुनिया और स्कूली विज्ञान शिक्षण पर गहरा असर पड़ा। सोवियत संघ द्वारा स्पूतनिक का प्रक्षेपण संयुक्त राज्य अमेरिका के लिए एक करारा झटका था। इसके चलते अमेरिका में यह बहस छिड़ गई कि हो-न-हो, यहाँ की विज्ञान शिक्षा में कुछ दिक्कत है, समस्या है जिसकी वजह से हमारे यहाँ अच्छे वैज्ञानिक तैयार नहीं हो पा रहे हैं। इस वजह से उस दौर में अमेरिका में स्कूली विज्ञान शिक्षण के कई प्रोजेक्ट प्रारम्भ हुए। हालाँकि, यह दीगर बात है कि कुछ साल बाद अमेरिका द्वारा अन्तरिक्षयान के प्रक्षेपण के बाद इनमें वह जोश नहीं रहा और सरकारी मदद भी कम होती गई। अमेरिका में सबसे बड़ी चिन्ता यह थी कि बच्चे विज्ञान शिक्षण से विमुख हो रहे हैं। इस चिन्ता के चलते वहाँ जो प्रमुख प्रयास हुए, उनमें सबसे अहम यह था कि विज्ञान शिक्षण में 'विज्ञान के अपने तरीके' का गहन प्रशिक्षण शामिल होना चाहिए और बच्चों को स्कूलों में एक वैज्ञानिक की तरह काम करना चाहिए।

उस दौरान हार्वर्ड फिज़िक्स प्रोजेक्ट, दी स्कॉटिश स्कूल प्रोग्राम और इंग्लैंड में नफील्ड प्रोजेक्ट शुरू किए गए थे। हालाँकि, ये कार्यक्रम एक-दूसरे से काफी अलग थे मगर इन सबमें एक साझा पहलू यह था कि ज़ोर तथ्यों और आँकड़ों पर महारत हासिल करने की बजाय विषय की संरचना सीखने-सिखाने पर हो। ज़ोर विज्ञान के परिणामों की बजाय, विज्ञान की प्रक्रिया पर था और कोशिश थी कि मात्र रट भर लेने की बजाय छानबीन और प्रयोगों को विज्ञान शिक्षण में शामिल किया जाए। कक्षा में शिक्षक भाषण की बजाय बच्चों को प्रयोग करने और खोजबीन करने के अवसर दें।

हालाँकि, इन कार्यक्रमों में बच्चों का अपने परिवेश और अनुभवों को शामिल करना लगभग नज़रअन्दाज़ किया गया था। साथ ही, बच्चे किस स्तर की अमूर्त सोच के लिए तैयार हैं, इस बात का महत्व इनमें शामिल नहीं था। एक और बात गौरतलब है – जो बात हम करते हैं कि विद्यार्थियों को स्कूली विज्ञान शिक्षण के तहत वह ज्ञान और हुनर हासिल हों जो उन्हें अपने परिवेश में विचारशील जीवन जीने में मददगार हों।

वैसे हमारे यहाँ विज्ञान सहित अन्य विषयों में भी जो सीखा जाता है, वह ग्रहीत ज्ञान (रिसीव्ड नॉलेज) के रूप में सीखा जाता है। विज्ञान की बात करें तो आज भी विज्ञान को तथ्यों, सूत्रों और परिभाषाओं सहित भारी-भरकम पुलिन्दे के रूप में बच्चों को परोसा जाता है। विज्ञान के पाठ्यक्रम में हर सवाल का जवाब खोजने देने की बजाय उसका पका-पकाया हल बच्चों को कण्ठस्थ करने को दिया जाता है। इसलिए आम तौर पर बच्चों के लिए प्रयोग करने, खोजबीन में शामिल होने और चर्चा करने का कोई स्थान ही नहीं दिखता। दरअसल, ये सब फालतू की बातें मानकर नज़रअन्दाज़ कर दिए जाते हैं।"

दौर नई कोशिशों का

"तो क्या सोवियत संघ में स्कूली शिक्षण इतना बढ़िया था कि उसकी वजह से स्पूतनिक का प्रक्षेपण हुआ? यानी कि क्या स्कूली शिक्षण की वजह से ही ऐसे वैज्ञानिक बने और इतनी बड़ी खोज हो सकी?" मास्साब ने सवाल किया।

स्रोत सदस्य ने जवाब कुछ यों दिया, "यही तो दिलचस्प मामला है। ऐसा कोई व्यवस्थित अध्ययन उपलब्ध

नहीं है कि 1960 के दौरान सोवियत संघ में स्कूली विज्ञान शिक्षण की गुणवत्ता से स्पूतनिक का कोई ताल्लुक है भी क्या।

यही वह दौर था जब हमारे यहाँ भी विज्ञान शिक्षण को लेकर कुछ कोशिशें प्रारम्भ हो गई थीं। 1967 में ऑल इंडिया साइंस टीचर्स एसोसिएशन के भौतिकी अध्ययन दल ने एक प्रोजेक्ट चलाया था जिसे वास्तव में एनसीईआरटी का वित्तीय सहयोग प्राप्त था। यह तीन साल तक, खासकर पब्लिक स्कूलों - दून, नाभा और अजमेर में चला। प्रोजेक्ट में नफील्ड कार्यक्रम को भारतीय अन्दाज़ के अनुकूल ढालने की कोशिश की गई थी। यानी कि नफील्ड कार्यक्रम से इस दल को समर्थन प्राप्त था। नफील्ड कार्यक्रम इंग्लैंड में चलाया जा रहा था।"

मास्साब ने बीच में रोककर समझना चाहा, "तो क्या नफील्ड को ही अपने यहाँ पर अपना लिया गया?"

"नहीं, बिलकुल नहीं। ये लोग नफील्ड से प्रभावित थे। उस दौरान जो विज्ञान स्कूलों में पढ़ाया जा रहा था, उससे ये लोग काफी परेशान थे। ये लोग शिक्षक ही थे। एक तो बी.जी. पित्रे व दूसरे सी.के. दीक्षित, ये दोनों भौतिक शास्त्र से ताल्लुक रखते थे।"

फिज़िक्स थ्रू एक्सपेरिमेंट

"हमारे देश में जो प्रोजेक्ट प्रारम्भ किया गया था, उसका नाम था फिज़िक्स थ्रू एक्सपेरिमेंट। इसकी किताबें विज्ञान शिक्षण के अनुरूप थीं। जहाँ विज्ञान की पारम्परिक किताबें जानकारियों से भरी थीं, वहीं फिज़िक्स थ्रू एक्सपेरिमेंट की किताबें बच्चों को ज्ञान हासिल करने के तरीके सिखाने पर केन्द्रित थीं। विज्ञान में प्रयोग करके कैसे ज्ञान को रचा जाता है, इसमें माहिर बनाने की कोशिश थी।

फिज़िक्स थ्रू एक्सपेरिमेंट को जिन स्कूलों में चलाया जा रहा था, वहाँ एनसीईआरटी ने कोई दिलचस्पी नहीं ली। तब पित्रे और दीक्षित ने बम्बई (अब मुम्बई) के टीआईएफआर के वैज्ञानिकों के बीच चर्चा की। वे लोग भी विज्ञान शिक्षण की दकियानूसी विधि से परेशान थे। उन सबको लगता था कि विज्ञान एक ऐसा विषय है जो समाज के साथ जुड़े। टीआईएफआर के लोगों को जब इस

प्रकार के प्रयोग का पता चला तो उनमें खलबली मच गई। प्रोफेसर यशपाल और वी.जी. कुलकर्णी जैसे वैज्ञानिकों ने इसे मुम्बई में नगर निगम के स्कूलों में चलाने की पेशकश की। संयोग से मुम्बई नगर निगम के दस स्कूलों में इसे चलाने की अनुमति भी मिल गई।

बम्बई में तीन साल तक यह कार्यक्रम अच्छे से चलाया गया। तीन साल के बाद कार्यक्रम को बन्द इसलिए करना पड़ा क्यूँकि नगर निगम ने परीक्षा प्रणाली में परिवर्तन करने की छूट नहीं दी, जिसके बिना इस प्रयास की कोई सार्थकता ही नहीं थी।"

बम्बई से होशंगाबाद

"तो फिर यह कार्यक्रम होशंगाबाद कैसे पहुँचा?" मास्साब समझना चाह रहे थे।

"हाँ, यह सवाल भी दिलचस्प है। उस दौरान टीआईएफआर में एक अन्य व्यक्ति उपस्थित थे जिनका नाम है अनिल सद्गोपाल।"

स्रोत सदस्य को बीच में ही रोक दिया मास्साब ने। "तो अच्छा, ये अनिल भाई उस वक्त मुम्बई में थे!"

"हाँ, अनिल सद्गोपाल मुम्बई में शुरू हुए इस विज्ञान के प्रशिक्षण में पहुँच गए थे और वे ध्यान से उसे देख-परख रहे थे। वे विज्ञान के इस प्रशिक्षण से काफी प्रभावित हुए। यह वह वक्त था जब वे मुम्बई छोड़कर किशोर भारती को बनाने की प्रक्रिया में लगे हुए थे।

होशंगाबाद विज्ञान की शुरुआत 1972 में हुई। अनिल सद्गोपाल और मित्र मण्डल केन्द्र के संयोजक, सुदर्शन कपूर की आपसी बातचीत में मुम्बई के कार्यक्रम के बारे में विस्तार से चर्चा हुई। सुदर्शन कपूर को लगा कि ऐसे कार्यक्रम को हमारे यहाँ भी शुरू करना चाहिए और इस प्रकार बात आगे बढ़ी।

मित्र मण्डल केन्द्र और किशोर भारती ने मिलकर यह प्रस्ताव रखा कि शिक्षा ऐसी हो जिसमें बच्चे स्वयं अपने हाथों से प्रयोग करें, प्रयोगों के अवलोकन करें और उन्हें अपनी भाषा में लिखें। फिर उन अवलोकनों के आधार पर अपने साथियों और शिक्षकों से चर्चा करके खुद ही स्वतंत्र निष्कर्ष निकालें। उन्हें शिक्षक से सवाल पूछने के लिए प्रेरित किया जाए और उन सवालों का उत्तर ढूँढ़ने के लिए उचित प्रयोगों की रचना करने के लिए सक्षम बनाया जाए। शिक्षक की भूमिका सर्वज्ञाता होने की बजाय प्रेरणास्रोत, मार्गदर्शक व सहयोगी जैसी हो। इन मकसदों की पूर्ति के लिए परम्परागत छात्र-शिक्षक सम्बन्ध, पाठ्यपुस्तकें, पाठ्यक्रम और शिक्षण पद्धति बदलने की तैयारी हो। इस प्रकार का प्रस्ताव शिक्षा विभाग के सामने रखा गया।

और कितना कबाड़ा?

उस दौरान जब मिडिल स्कूलों की विज्ञान की पढ़ाई का सर्वेक्षण और विवेचन किया जा रहा था तो कई सवाल सामने आए। विज्ञान शिक्षण के माध्यम से बच्चे की चिन्तन शक्ति का विकास क्यों नहीं होता? बच्चों को विज्ञान के तथ्य रटने क्यों पड़ते हैं? रटकर परीक्षा देने के बाद उन तथ्यों की सार्थकता क्या है? उस शिक्षा का क्या उपयोग जो स्कूल की चारदीवारी के भीतर की पढ़ाई को वास्तविक जीवन के अनुभव से दूर रखती हो? क्या ऐसी शिक्षा नहीं हो सकती जिसमें बच्चे सीखें और समझें भी? स्कूल बच्चों से जड़, चुप व निष्क्रिय होने की अपेक्षा क्यों करता है? क्या स्कूल इसी तरह बच्चों की जिज्ञासा को कुण्ठित और उनकी चिन्तन शक्ति को अवरुद्ध करते रहेंगे?

इन्हीं बातों को ध्यान में रखते हुए किशोर भारती और मित्र मण्डल केन्द्र, रसूलिया के कार्यकर्ता जब मध्य प्रदेश की राजधानी में शिक्षा विभाग के शीर्ष पर विराजमान अधिकारी के पास अपने यहाँ के स्कूलों में विज्ञान शिक्षा के बीजारोपण का प्रस्ताव लेकर गए, तो उन अधिकारी के मातहत ने शंका ज़ाहिर की कि कहीं ये लोग कबाड़ा न कर दें। उन अधिकारी ने पलटकर कहा, "जितना कबाड़ा हो चुका है, इससे ज़्यादा ये लोग और क्या करेंगे! इसलिए इन्हें कार्य करने की अनुमति दे दी जाए।"

बहरहाल, किशोर भारती और मित्र मण्डल रसूलिया को होशंगाबाद ज़िले की ग्रामीण क्षेत्र की चुनी गई 16 शालाओं में कार्य करने की अनुमति मिल गई। भारतीय शिक्षा के इतिहास में सम्भवतः पहली बार सरकार और स्वैच्छिक संस्थाओं की भागीदारी के माध्यम से एक अनूठा उदाहरण प्रस्तुत हुआ, जिसे हम 'होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम' (होविशिका) के नाम से जानते हैं।"

चर्चा का दौर थमने का नाम नहीं ले रहा था। अगले दिन मास्साब को प्रशिक्षण की कक्षा में जाना था। और स्रोत सदस्य को अगले दिन के अपने प्रशिक्षण-सत्र की तैयारी में जुटना था इसलिए न चाहते हुए भी बातचीत को यहीं रोकना पड़ा।

कालू राम शर्मा (1961-2021): अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन, खरगोन में कार्यरत थे। स्कूली शिक्षा पर निरन्तर लेखन किया। फोटोग्राफी में दिलचस्पी। *एकलव्य* के शुरुआती दौर में धार एवं उज्जैन के केन्द्रों को स्थापित करने एवं मालवा में विज्ञान शिक्षण को फैलाने में अहम भूमिका निभाई।

सभी चित्र: योगेश्वरी: स्वतंत्र रूप से चित्रकारी करती हैं। साथ ही, म्यूरल और पोर्ट्रेट भी बनाती हैं। शारदा उकील स्कूल ऑफ आर्ट से कला में डिप्लोमा। वर्तमान में, अम्बेडकर यूनिवर्सिटी, दिल्ली से विज़ुअल आर्ट्स में स्नातकोत्तर कर रही हैं।